तारतम मंजरी

वर्ष २, अंक ३, जुलाई २०१६, पृष्ठ २८

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

स्वत्वाधिकारी :

श्री प्राणनाथ ज्ञान पीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

फोन नं. : ०१३३१.२४६०००, ८६५०८५१०१०

ई-मेल : shriprannathgyanpeeth@gmail.com. web : spjin.org

अनुक्रमणिका

इस अंक में.....

०१. सम्पादकीय (वाणी मथंन)	अमरलाल सेठी	०१
०२. कलश हिन्दुस्तानी टीका के अंश	श्री राजन स्वामी	०७
०३. वादविवाद प्रतियोगिता	.....	११
०४.जन्मना जायते शुद्रो	राजबाला बेहट	१४
०५. आनन्द मंगल	नीरू खुराना	१७
०६. त्याग महान	.....	२१
०७. साबूदाना	.....	२२
०८. अरवाह आशिक जो अर्श की	ज्योति सिरसा	२४

आवश्यक सूचनायें

प्यारे सुन्दरसाथ जी! जिस किसी सुन्दरसाथ जी ने आर्थिक सेवा एकत्र करने हेतु पिछले सत्र या सन् 2015 की रसीद बुक ले रखी हैं कृपया वे अपनी–अपनी सत्र की रसीद बुक जल्द ही धनराशि के विवरण सहित श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ में जमा करवाने का कष्ट करें तथा आगामी सन् 2016 की कोई भी रसीद काटने हेतु नये सत्र की रसीद बुक ज्ञानपीठ से पुनः प्राप्त करें।

प्रणाम जी

प्रकाशक :–
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट,
नकुड़ रोड, सरसावा
जिला–सहारनपुर, उत्तर प्रदेश
फोन – 01331 246000, 246871
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.com

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 110 रू.	.....
आजीवन 1000 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

सम्पादकीय

वाणी मंथन

अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्म परमात्मा जब अपने पंच स्वरूपों –(जोश, जाग्रत बुद्धि, अक्षर, आनंद अंग श्यामा जी तथा आवेश शक्ति) सहित महामति के धाम हृदय में विराजमान हो गये तब इस स्वरूप को प्राणनाथ जी कहा गया। उनके श्री मुख से जो वाणी कहलाई गई उसे तारतम वाणी कहते हैं। वह सम्पूर्ण कुलजम स्वरूप में संग्रहीत है। इन पंच स्वरूपों का एक ही ठौर होने का उल्लेख कुरान के नूरे नास में भी कथन किया गया है।

भी कह्या बानीय में, पंच स्वरूप एक ठौर।
फुरमान में भी यों कह्या, कोई नहीं या बिन और।।

वाणी में कहा गया कि वे पंच स्वरूप एक ही स्वरूप में जिसे निःकलंक बुद्ध या प्राणनाथ या आखरूल इमाम मेंहदी कहते हैं यही समुच्च स्वरूप स्वलीला अद्वैत कहा जाता है इनके अलावा किसी का कोई अस्तित्व नहीं है। यही परम सत्ता है।

महामत कहें सुनो साथ, देखो खोल बानी प्राणनाथ।
धनी ल्याए धाम से वचन, जिनसे न्यारे न होए चरन।।

श्री महामति कहते हैं हे सुन्दरसाथ जी! मेरी एक विशेष प्रार्थना सम्यक रूप से सुनिये प्रियतम प्राणनाथ जी की इस तारतम वाणी का मंथन कर इसके बातूनी अर्थ खोलिये। अर्थात अपने इस सांसारिक मन चित्त बुद्धि अहंकार रूपी अन्तःकरण के ' मै पन' से हट कर अपने अस्तित्व की आधार भूमि पर खड़े होकर पूरी समग्रता और श्रद्धा के साथ अपनी गहरी संवेदनशीलता में तारतम वाणी में अनुस्यूत गहन भावों की तरंगो में स्नात होईये। और इस वाणी का मंथन कर इसके सार तत्व रूप अमृतरस का पान कीजिये। तो आपकी जीवन में आने वाली उलझनों के भ्रम का पर्दाफास हो जायेगा। और अपने हकीकत के स्वरूप की समझ आ जायेगी इससे आपकी पूरी रहनी ही बदल जायेगी। इतना ही नहीं धीरे – धीरे मारिफत (परम

सत्य) के गुझ रहस्यों का भी बोध होने लगेगा। क्योंकि इन वचनों के माध्यम से धामधनी ने परमधाम की न्यामतों को एवं साक्षात अपने स्वरूप को इस जगत में उतारा है। अतः इन वचनों की गहन गंभीरता से इनमें किये गये सूक्ष्म इशारों के निर्देशानुसार चलकर अपना जीवन सार्थक कीजिये।

इस तारतमवाणी का जितना ही मंथन करेंगे उतना ही नवनीत निकलेगा। वाणी की कुंजी में भी इसके मंथन का निर्देश दिया गया है।

अंग उत्कंठा उपजी, मेरे करना एह विचार।
ए सत वाणी मथ के, लेऊं जो इनको सार।।

हे प्राण प्रियतम आपकी इस अंगना के अस्तित्व शरीर में बार – बार स्फुरणा हो रही है कि क्यों न इस सत्य वाणी का मंथन कर उसका सार तत्व अपने दिल में धारण कर अपनी रहनी तदानुरुप बनाऊँ।

समर्पण के पूर्व उसका भी संकल्प होता है। इसी श्रृंखला में प्रारम्भिक स्तर पर तारतम मंत्र के प्रभाव से अंगना के दिल में संकल्प विकल्प उठते हैं। महामति जी के निर्देशानुसार तारतम कुंजी का मंथन होना अति आवश्यक था। इसीलिये उन्होंने तारतम कुंजी जो धाम धनी सतगुरू देवचन्द्र द्वारा लाई गई, उसमें पांच चौपाईयां और जोड़ दी ताकि उस तारतम कुंजी का बातूनी अर्थ सहजता व सरलता पूर्वक निकाला जा सके। किन्तु अफसोस है कि आजतक प्रणामी आलम में उनके निर्देश का पालन नहीं किया गया इसलिये उस मूल कुंजी का बातूनी अर्थ अभी तक नहीं निकाला जा सका। वाणी में कई बार कहा गया कि वाणी मेरा स्वरूप ही समझो। किन्तु सुन्दरसाथ शिरोमणि शब्दों को पकड़कर अपनी अकड़ दिखाने में लग जाते हैं, उसका मंथन नहीं करते। महामति जी ने वाणी में इशारा भी किया है कि –

जिन देख्या मेरे वजूद को, सो रहया बीच नासूत।
जिन जन्या मेरी आतम को, सो पोहोंच्या बीच लाहूत।।

हे सुन्दरसाथ जी! जो भी मेरे इस तारतम मंत्र के शब्द रूपी शरीर को ही देखेगा। उसके भाव की गहनता को नहीं समझेगा, उसका हृदय द्रवित होकर नहीं पिघल पायेगा, वह इस नश्वर जगत में ही फंसा रहकर अपने गाल बजाता रहेगा। अन्ततः उसका जीवन निरर्थक हो जायेगा। और जो

तारतम वाणी के शब्द के नीचे के भाव व भाव के नीचे की तरंगो में तरंगित होकर, उन भावों की गहनता में अभिशिक्त होकर उसके मूल तत्वों के निर्देशानुसार रहनी में चलेगा तो वह मेरी आत्मा अर्थात स्वरूप को पा कर परमधाम की न्यामतों का अनुभव करने लगेगा। वाणी में कहा है –

ए सहूर करो तुम मोमिन, जब फैल से आया हाल।
तब रूहें फरामोसी न रहे, बोए हाल में नूर जमाल।।

हे सुन्दरसाथ जी! अपने आपा अर्थात मन चित बुद्धि अहंकार रूपी अन्तकरण का स्वरूप जो प्रकृति व समाज द्वारा निर्मित किया हुआ है उसकी आधार भूमि को छोड़कर अपने स्वरूप पर अपनी स्वप्रज्ञा से विचार करे तो उसे जानने के लिये अपने अंकुर के अनुसार अपने अन्तस में प्यास जगने लगेंगी। महामति के वचनों की आवहवा – भाव तरंगों की ठोकर से वह और गहराकर अभीप्सा बन जायेगी। जब विरह की वेदना प्रज्वलित हो उठेगी। तब संसार की तरफ देखना अपने आप बंद हो जायेगा। और हमारी रहनी ही बदल जायेगी। उस स्थिति में संसार की फरामोसी का पर्दा अपने आप तिरोहित होता नजर आयेगा। फिर परब्रह्म परमात्मा को यह शिकायत नहीं हो पायेगी कि जैसा कि वाणी में कहा है कि–

तू आपे न्यारी होत है, पिऊ नहीं तुझ से दूर।
परदा तूं ही करत है, अन्तर न आड़े नूर।।

परदा हमेशा मासूका करती है आशिक तो आक्रमक बनकर उसे उघाड़ना चाहता है। किन्तु हम सुन्दरसाथ ऐसे ढीट हैं कि अपने प्राण प्रियतम के आने के समय अपना मुख फरामोसी के पर्दे से छुपा लेते हैं। यदि हमारी अर्न्तदृष्टि जाग्रतहो जावे तो पिया का अन्तर में ही बास है। किन्तु हम तो उसे इस बहिर्जगत में कोई न कोई कृत्य करके पाना चाहते हैं। यही सबसे वही बिडम्बना है कि बाहर के कृत्यों से हम अपने अन्तस में क्रान्ति करना चाहते हैं। पाठों का पठन – पाठन, सेवा पूजा, वाणी चर्चा, सभी कार्य कर्मकाण्डों की श्रेणी के हैं जिनमें हम उलझे रहते हैं। और हकीकत को भूले रहते हैं –

राह निपट बारीक है, तिन बारीक पर बारीक।
साथें लई लोक जाहेरी, जो उतरी लीन से लीक।।

सुन्दरसाथ न ही तारतम वाणी के निर्देशों का पालन करने में दिलचस्पी लेते हैं और न

ही अपना स्वंय का अध्ययन कर अपनी स्थिति को समझने की कोशिश करते हैं। वे निन्द्रावस्था में केवल एक दूसरे का अनुकरण अंधविश्वासों के साथ सम्मोहन की तरह करते रहते हैं। और उनके दिल में सबसे बड़ी भ्रान्ति पलती है कि जो हम बाहर कृत्य करेगी उससे कुछ न कुछ पुण्य व सद्गति मिलेगी इससे जीवन भर एक दूसरे के पीछे होकर कर्म काण्डों में उलझे रहते हैं। वह अपना समय और जीवन दोनों बरबाद करते हैं। अधोगमन के मार्ग से अधोगति में ही जाते हैं।

मनुष्य जाति का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि जोभी जबभी जीवन का परमज्ञान खोजा गया उसकी चर्चा कर हम अपना जीवन गुजार देते है। हमारे दिल में उसे आत्मसात कर उसे जीवन में उतारने का ख्याल ही नहीं आ पाता। उतारना भी चाहें तो कोई राह नहीं मिल पाती। निर्णय भी करले तो उठने के लिये दिशा ही नही सूझती। यह विषय इतना गहन गंभीर एवं इतना सूक्ष्म है कि आशा ही छोड़ देते हैं। कि उसे जीवन में उतारा भी जा सकेगा। फिर हम अपने आलस्य प्रमाद में पड़े रहते हैं तारतम वाणी भी परमज्ञान हैं उसका भी यही हाल हो रहा है। सुन्दरसाथ कहने को कई लाख हैं किन्तु यह वाणी कितने के हृदय से नीचे उतर पाई कौन इस साक्षात स्वरूप का अनुभव कर पाया। वाणी जानना अलग बात है वाणी में जीना अलग बात है वाणी को बिना जीये, बिना आत्मसात किये उसका हम बातूनी अर्थ भी नहीं समझ सकते है, महामति वाणी के शब्दों में–

असत मंडल में सब कोई भूल्या, पर
अखंड किने न बताया।
नींद का खेल खेलत सब नींद में, जाग
के किने न देख्या।।

वाणी में भी कहा है उनकी मेहर के बिना कोई भी जाग नहीं सकता। यह कथन प्रकृति के आधीन जीने वाले लोगों के लिये बड़ी राहत देता है। जो सो रहे हैं वे और गहरे खर्राटे मारकर सोने लगें और कहने लगे जागने जगाने का काम हमारा नहीं है परब्रह्म परमात्मा का है जब चाहेंगे जगा लेंगे अभी सांसारिक सुख क्यों छोड़ जावे ?यह जीव सृष्टि की सोच है। वाणी में कहा गया है कि तुम एक कदम चलोगे तो हमारी ओर (परमात्मा) दस कदम चलेंगे। फिर एक कदम चलने में आलस्य क्यों किया जावे। यह एक कदम बड़ा ही महत्वपूर्ण है। जब हम एक कदम रखते है तो पूरा शरीर चलता है। अध्यात्मिक जगत में एक कदम अपने पूरे

अस्तित्व से ही रखा जावेगा। मन बुद्धि चित्त अहंकार से यह गति निर्धारित नहीं होती बल्कि ये तो उस दिशा में जाने के अवरोध है। अध्यात्मिक जगत की एक विशेषता है कि इस ओर यात्रा आंशिक नही बल्कि समग्र होती है और जिसने संसार की तरह आंशिक चलने की इस ओर गति की उसे कभी भी सत्य की उपलब्धि नही हो सकती है। धेरण्ड ऋषि ने कहा है जब तक प्रेमी को अपने होने का आभास बना रहे तब तक वह प्रेम झूठा है और जब तक ध्यानी को अपनी सुध बुध रहेगी तब तक उसका ध्यान भी प्रमाणिक नही माना जा सकता है। यहां होना ही प्रमाणिक है। जानना प्रमाणिक नहीं है। ध्यान या प्रेम में प्रमाणिक हो जाना यह पहला एक ही कदम है। बाकी कदम उस पर छोड़ दो और समर्पण – तथाता में जीने लगो तब यात्रा पूरी ही समझो।

वस्तुस्थिति यह कि अभी हम दो सपनों में घड़ी के पेन्डोलम के अनुसार डोल रहे है। शरीर सोने पर घटित स्वप्न और शरीर के जागने पर घटित स्वप्न। इन दोनों स्थितियों को हम अपना जीवन कहते हैं। स्वप्न दोनों हैं इसलिये महामति जी ने कहा है 'नींद का खेल खेलत सब नींद में' जब हमारी आत्मा जग जाये तभी जागना माना जायेगा।

यह संसार नश्वर क्षंणभंगुर परिवर्तनशील एवं भ्रमात्मक है इसलिये उसे असत कहा गया है। इसी तरह प्रकृति – प्रदत यह शरीर, ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्दियां, मन, चित, बुद्धि, अहंकार सभी पूरा मानो शरीर भी नश्वर क्षण भंगुर परिवर्तन शील और भ्रमों का जनक व प्रपंचो का उत्पादक है। और इसी को हम अपना होना समझते हैं। अखण्ड शाश्वत यदि रूप है तो इसका ज्ञान किसी को कुछ भी नहीं है। न ही आजतक कोई अखंड शाश्वत प्राप्ति का रास्ता बता पाये हम सुन्दरसाथ इसी मरण धर्म प्रकृति के उपकरणों के आधीन इसी के साथ भ्रमण रमण व रूदन के अनुसार कर रहे है सुन्दरसाथ को तारतम वाणी का भी ज्ञान मिल गया हमारी बुद्धि में भी कोई शंका भी नहीं है किन्तु हमारी आत्मा कैसे जगे, रास्ता कहीं सेभी नहीं मिल पा रहा है। परब्रह्म परमात्मा की कृपा तो हमेशा बरसती ही रहती है किन्तु हम सुन्दरसाथ उनकी कृपा को कैसे ग्रहण करे ?हमारी पात्रता में कहा खोट है इसके लिये स्वनिरीक्षण करेगे तो पायेंगे कि यदि हमारी पात्रता का पात्र पूरी श्रद्धा से भरा है और हम बोध पूर्वक सतर्कता पूर्वक सजग हैं अर्थात गहरी जागरूकता व गहरी संवेदनशीलता में प्रयास रत हैं, और हृदय प्रेम

से भरा हुआ है तो उसकी कृपा मिल जाएगी, और यदि हमारे पात्रता के पात्र में कई किस्म की वासनाएं भरी है ''मै और मेरा'' के नशों से पड़ा हुआ है जिस दिल में कृपा को रखना है। वहां महत्वाकांक्षाओं, नाना की ऐषणाओं ने कब्जा कर रखा है। तो उसकी कृपा नहीं हो सकती हम उनके कृपा पात्र नहीं, हो सकते हैं। कोरा और खाली दिल केवल प्रेम से भरा हुआ चाहिये तभी कृपा पात्र बन सकते हैं अन्यथा नहीं। वाणी में कहा है कि –

सब्दातीत निध ल्याए शब्दों में, मेटयो
सबन को अंधकार।
तीसें सृष्ट विष्णु सों बरसें, प्रेमे पीयेगा
सब्दों का सार।।

महामति जी कहते हैं कि तारतम वणी साक्षात अमृत रस है जो यहां की भाषा वाणी के माध्यम से इस द्वैत मूलक दुनिया में नहीं आ सकता था, फिर भी ब्रह्मांगनाओं के कारण श्री राज जी ने एक अनहोनी यह की है अद्वैत के रस को द्वैत के संसार मे लाने का प्रयास किया है। अर्थात् यहां के शब्दों में वहां का प्रकाश भर कर उन शब्दों की ठोकर से इस संसार के द्वैत द्वन्द द्वेष वर्धक अज्ञानांधकार को, इस दुनी की दुई बोधक मति को मिटाकर उनके दिलों को निर्मल चेतना से भरकर प्रकाशित किया जा रहा है। ताकि वे ब्रह्मांगनायें अद्वैत की भूमिका का रसास्वादन इसी द्वैत मूलक संसार में कर सकें। साथ जी ईश्वरी सृष्ट और जीव सृष्टि को भी ब्रह्मांगनायें इस शब्दों के प्रभाव से उनके 'पुरूषपना' को अपनी सतसंग से मिटाकर उनके पूर्व संस्कारों, संसार के बखेड़ों और वाणी के वागजालों की उलझनों से सुलझाकर उनके बुजरकी के मदो से मुक्त करें। तारतम वाणी का मंथन कर उसके सार तत्व रूप ईशारों के अनुसार उनकी रहनी का रूपान्तरण कर दे। ताकि उनके दिल भी प्रेम की संवेदनशीलता से भरकर उनके स्त्रैव चित होकर उसमें नमनीयता कोमलता के गुण पनप आवें। तभी उनका जीवन निर्मल सहज व सरल हो सकता है। तभी महामति का लक्ष्य कि ' सुख शीतल करूं संसार' की उपलब्धि हो सकती है। यहां समय सीमा का उल्लेख व्यंगात्मक भाषा का उपयोग इसलिए किया गया है ताकि ईश्वरी सृष्टि व जीव सृष्टि की भी जागृति की दिशा में तीव्रता, एवं उनकी त्वरा बढ़ सके और शीघ्र से आत्म जागृति को उपलब्ध हो कर और वाणी के अनुसार समग्रता से जी सकें, आत्म रमण कर सकें और अपने अंकुर के अनुसार गति कर सके।

स्वामी कृष्ण सिद्धार्थ
श्री प्राणनाथ ज्ञान पीठ सरसावा

कलश हिन्दुस्तानी टीका के अंश

टीका कर्ता - श्री राजन स्वामी

राग सोख मलार

इस प्रकरण में परमधाम के प्रेम (इश्क) का वर्णन किया गया है। प्रेम और इश्क को अलग–अलग मानने की भ्रान्ति चल पड़ी है। वस्तुतः इन में केवल भाषा भेद है। परिक्रमा ग्रन्थ के कथन 'याके प्रेमैं के वस्तर, याके प्रेमै के भूखन, प्रेम धनी को आउध, प्रेम बसे पिया के चित' आदि के कथनों से स्पष्ट है कि प्रेम को केवल योगमाया तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, बल्कि धाम धनी के हृदय में भी इसका विद्यमान होना मानना पड़ेगा।

इस्क बड़ा रे सबन में, ना कोई इस्क समान।

एक तेरे इस्क बिना, उड़ गई सब जहान।।१।।

श्री महामति जी की आत्मा कहती है– निःसन्देह परमधाम का ज्ञान एवं धनी के' लिये विरह का होना अनमोल सम्पदायें हैं, किन्तु प्रेम की महिमा इन सबसे बड़ी हैं। प्रेम के समान कुछ भी नहीं है। यदि इस ससांर में आने के पश्चात् आपका प्रेम नहीं मिलता है तो मेरे लिये इस संसार का कोई अस्तित्व ही नहीं है अर्थात इस ससांर में मेरा रहना निरर्थक है।

चौदे तबक हिसाब में, हिसाब निरंजन सुंन।

न्यारा इस्क हिसाब थें, जिन देख्या पिउ वतन।।२।।

मेरे सर्वस्व! चौदह लोकों के इस ब्रह्माण्ड की माप की जा सकती है। अनन्त कहे जाने वाले निराकार मण्डल को भी मापा जा सकता है किन्तु जिस प्रेम से परमधाम को प्रत्यक्ष देखा जाता है, उस प्रेम को मापा जाना किसी भी स्थिति में सम्भव नहीं हैं।

लोक अलोक हिसाब में, हिसाब जो हद बेहद।

न्यारा इस्क जो पिउ का, जिन किया आद लों रद।।३।।

पृथ्वी, सूर्य आदि सभी स्थूल लोकों एवं असीम सूक्ष्म आकाश सहित इस अंनत्त सृष्टि (हद) को नापा जा सकता है, सीमातीत कहे जाने वाले बेहद मण्डल की भी माप की जा सकती है, किन्तु मेरे प्राणेश! आपका प्रेम तो इन सबसे न्यारा ही है क्योंकि इसके हृदय में विद्यमान हो जाने पर अब तक की सारी गणनायें निरर्थक लगती हैं।

भावार्थ–मानवीय बुद्धि के लिये आकाश या निराकार का मण्डल अनन्त है किन्तु ईश्वरीय सृष्टि के लिये नहीं। इसी प्रकार ईश्वरीय सृष्टि भी बेहद से परे की कोई बात नहीं जानती। ब्रह्मसृष्टि बेहद से परे परमधाम की तो बात जानती है किन्तु प्रेम (इश्क) की पूर्ण पहचान उन्हें अब तक नहीं थी।"

एक अनेक हिसाब में, और निराकार निरगुन।

न्यारा इस्क हिसाब थें, जो कछू

ना देखे तुम बिन।।४।।

आदि नारायण एवं उनके संकल्प 'एकोऽहम् बहुस्याम्' से उत्पन्न होने वाली जीव सृष्टि तथा निराकार–निर्गुण को भी सीमा बद्ध किया जा सकता है किन्तु आपका प्रेम सीमाबद्ध गणना से परे है। जब वह हृदय में आ जाता है, तो आपके अतिरिक्त अन्य कोई भी नहीं दिखायी देता है।

और इस्क कोई जिन कथो, इस्कें ना पोहोंच्या कोए।

इस्क तहां जाए पोहोंचिया, जहां सुन्य सब्द ना होए।।५।।

इस संसार का कोई भी व्यक्ति प्रेम (इश्क) की व्याख्या करने का प्रयास न करे, क्योंकि आज दिन तक इस ब्रह्माण्ड के किसी भी व्यक्ति ने प्रेम के वास्तविक स्वरूप को जाना ही नहीं है। प्रेम का यथार्थ स्वरूप उस स्वलीला अद्वैत परमधाम में हैं जहाँ न तो जड़ शून्य है और न नश्वर जगत के शब्द हैं।

नाहीं कथनी इस्क की, और कोई कथियो जिन।

इस्क तो आगे चल गया, सब्द समाना सुंन।।६।।

प्रेम (इश्क) को शब्दों के माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता है। इस सृष्टि के किसी भी मनीषी को इश्क (प्रेम) की व्याख्या करने का अनुचित प्रयास नहीं करना चाहिए। क्योंकि किसी के भी द्वारा कहे गये शब्द शून्य में ही लीन हो जाते हैं जबकि प्रेम की गति तो शून्य से परे परमधाम में रहती है।

सब्द जो सूकया अंग में, हले नहीं हाथ पाए।

इस्क बेसुध न करे, रही अंदर बिलखाए।।७।।

मेरे प्राणवल्लभ! आपके प्रेम में मेरी ऐसी अवस्था हो गयी है कि मेरे हृदय से निकलने वाले शब्द हलकों (होंठों) तक आते–आते सूखे जा रहे हैं (समाप्त हो जा रहे हैं)। मेरे हाथ–पैर भी हिलने–डुलने की स्थिति में नहीं रहते। आपके प्रेम में बेहोशी जैसी बेसुधि तो नहीं आती किन्तु आन्तरिक रूप से विलखना पड़ता है।

भावार्थ– शब्द की उत्पत्ति मूलाधार चक्र में होती है, उसे 'परा वाणी' कहते हैं। हृदय में आकर वही शब्द 'पश्यन्ती' कहा जाता हैं। कण्ठ में उसे मध्यमा तथा मुख से निकलने पर बैखरी वाणी कहा जाता है। विरह को कुछ अंशों में व्यक्त किया भी जा सकता है किन्तु प्रेम को तो नाममात्र भी नहीं, क्योंकि वह शब्दातीत है। यही कारण है कि उपरोक्त चौपाई के प्रथम चरण में प्रेम के शब्दों को होठों में सूख जाने वाला कहा गया है।

पांपण पल ना लेवही, दसो दिस नैन फिराऊं।

देह बिना दौड़ों अन्दर, पिया कित मिलसी कहां जाऊं।।८।।

आपके प्रेम भरे मधुर दर्शन (शरबत – ए – दीदार) की चाहत में पल भर के लिये भी मेरी आंखों की पलकें झपकती नहीं हैं। मैं दसों दिशाओं में आप को खोजती फिर रही हूँ। यद्यपि मेरा शरीर तो एक ही स्थान पर स्थिर है किन्तु सांकल्पिक रूप से मैं दसों दिशाओं में आपको ही ढूंढ रहीं हूँ। मेरे मन में केवल एक ही विचार

है कि मेरे प्राणेश्वर! आप मुझे कहाँ मिलेंगे कि मैं आकर आपसे मिल लूं।

भावार्थ– दस दिशायें इस प्रकार हैं– पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान, ऊपर, तथा नीचे। हृदय में प्रेम के प्रस्फुटित होने पर प्रेम की तरंगें मन के साथ संयुक्त होकर एक भावमय (संकल्पमय) शरीर की रचना करती हैं जो अपने प्रेमास्पद की खोज में सर्वत्र घूमता रहता है। चौ. ७–१० में प्रेम की मनोरम स्थिति का वर्णन किया गया है।

इस्क को ए लछन, जो नैनों पलक ना ले।
दौड़े फिरे न मिल सके, अन्दर नजर पिया में दे।।६।।

प्रेम का यही लक्षण है कि पल भर के लिये भी आंखों की पलकें झपकती नहीं हैं। जब चारों ओर भावमय (संकल्पमय) शरीर से दौड़ने पर भी प्रियतम के दर्शन नहीं होते हैं, तो वह अपनी अन्तर्दृष्टि को अपनी आत्मा में ही इस भावना के साथ केन्द्रित कर देती हैं कि मेरा प्रियतम मेरी आत्मा के धाम हृदय में बसता है।

भावार्थ– उपरोक्त कथन के आधार पर चितवनि के दो रूप स्पष्ट होते हैं। पहला स्वरूप वह है जिस में विरह के भावों के साथ ज्ञान दृष्टि से कालमाया एवं योगमाया को पार कर परमधाम में प्रवेश किया जाता है तथा नख से शिख तक युगल स्वरूप की शोभा में स्वयं को डुबोया जाता है। इसे ही संकल्पमय शरीर से दौड़ना कहा जाता है। इस स्थिति में विचरण करते–करते ज्ञान की अवस्था समाप्त हो जाती है तथा विरह की अवस्था गहराने लगती है।

यहाँ यह तथ्य ध्यान में रखने योग्य है कि अपनी परात्म की भावना से कालमाया एवं योगमाया को पार कर हमने अब तक जो भी परमधाम में विचरण किया होता है, वह भावमय (संकल्पमय) ही होता है और वह ज्ञान एवं हमारे अटूट विश्वास पर आधारित होता है जिसे हमने तारतम वाणी और ब्रह्मात्माओं के चरणों में बैठकर प्राप्त किया होता है। किन्तु इस अवस्था में हमारे जीव का अन्तःकरण क्रियाशील होता है जिसके परिणाम स्वरूप शरीर एवं संसार से हमारी पूर्ण निवृत्ति नहीं हुई होती है। इस प्रकार की चितवनि से मानसिक आनन्द प्राप्त होता है। विरह की परिपक्व अवस्था में सुरता शरीर, संसार तथा मन–बुद्धि के द्वन्दों से परे हो जाती है। इसके पश्चात् प्रेम की रस धारा बहने लगती है जिसमें आत्मा को यह विदित होने लगता है कि उसका प्राणेश्वर तो उसकी अन्तरात्मा में है। सागर की लहरों की तरह वह भी उसकी प्राणेश्वरी है। उससे न तो पल भर के लिये भी कभी अलग हुई थी और न कभी हो सकेगी।

इस अवस्था में आत्मा एवं परब्रह्म में ऐक्य भाव स्थापित हो जाता है, जिसका परिणाम यह होता है कि उसे अपनी आत्मा के धाम हृदय में सम्पूर्ण परमधाम सहित युगल स्वरूप के प्रत्यक्ष दर्शन होने लगते हैं। इसे ही अगली चौपाई के तीसरे चरण में 'अंदर तो न्यारा नहीं' तथा किरतंन १३२/४ में 'तो अधखिन पिऊ न्यारा नहीं, मांहें रहे हिल मिल कहा' गया है। भ्रान्ति वश उपरोक्त कथन का आशय यह कदापि नहीं लेना चाहिए कि इसमें अस्थि–मांस

के इस स्थूल शरीर की छाती में चितवनि करने के लिये कहा जा रहा है। प्रारम्भिक अवस्था में विरह की अग्नि को प्रज्ज्वलित करने के लिये मेरी छाती दिल की कोमल, तिनसे तुम्हारे पाँऊ कोमल' इतही सेज बिछाए देऊँ,जुदे करो जिन दम' जैसे भावों का आश्रय लेकर अवश्य स्थूल शरीर के हृदय में भावना कर सकते हैं। इसके पश्चात् ज्ञानमयी चितवनि (कालमाया एवं योगमाया से होते हुए परमधाम में) का ही आधार लेना पड़ेगा। विरह की परिपक्व अवस्था में स्वतः ही आत्मा के धाम हृदय में प्रियतम का दर्शन होगा। उस अवस्था में इस स्थूल शरीर या संसार का जरा भी आभास नहीं रहेगा।

नजरों निमख न छूटहीं, तो नाहीं लागत पल।

अन्दर तो न्यारा नहीं, पर जाए न दाह बिना मिल।।१०।।

उस अवस्था में क्षण भर के लिये भी प्रियतम की छवि ओझल नहीं होती है। यही कारण है कि पलकें भी झपकने का नाम नहीं लेती हैं। यद्यपि प्रियतम मुझसे पल भर के लिये भी आन्तरिक रूप से अलग नहीं हैं किन्तु जब तक बाह्य रूप से मिलन (साक्षात्कार) नहीं होता है, तब तक प्रियतम से मिलन की अग्नि (बल इच्छा) शान्त नहीं होती।

भावार्थ–उपरोक्त चौपाई के कथन से यह संशय होता है कि यहां किस अवस्था का वर्णन है जिसमें आंखों की पलकें झपकती नहीं हैं,?चितवनि की अवस्था में तो आंखे बन्द रहती हैं। उस स्थिति में तो झपकने का प्रश्न ही नहीं है। इसके समाधान में यही कहा जा सकता है कि आंखों के झपकने का तात्पर्य है–यदि खुली हो तो बन्द न हों और यदि बन्द हों तो खुलें नहीं। रात्रि के अन्धेरे या गहन एकान्त में जहां कोई भी अन्य न हों, वहां खुली आंखों से भी विरह में तड़पा जा सकता है। उस समय आंखों के खुले रहने पर भी संसार का आभास नगण्य सा होता है। प्रेम की प्रारम्भिक अवस्था में आंखे अध खुली हो सकती हैं परन्तु इसके पश्चात् वे बन्द तो हो सकती है, किन्तु खुलना नहीं चाहेंगी। चितवनि की गहन अवस्था या प्रेम की परिपक्वावस्था में आंखें पूर्णतया बन्द हो जाती हैं। इस अवस्था में उनके आन्तरिक नेत्र खुल जाते हैं जिनसे प्रियतम का दर्शन होता रहता है। उसमें जो निरन्तरता बनी रहती है अर्थात् पलभर के लिये भी दर्शन में व्यवधान नहीं होता, उसे ही पलकों (आन्तरिक पलकों) का न झपकना कहते हैं।

जो दुख तुमहीं बिछुरे, मोहे लाग्यो जो तासों प्यार।

एता सुख तेरे विरह में, तो कौन सुख होसी विहार।।११।।

मेरे प्राणप्रियतम! आपके वियोग में मेरे हृदय को जो पीड़ा हो रही है, मुझे उससे ही गहरा लगाव हो गया है, क्योंकि उससे भी मुझे एक मधुर सामीप्यता (मीठे अहसास) की प्राप्ति होती है। जब आपके विरह में तड़पने पर इतना सुख मिलता है, तो आपके साथ प्रत्यक्ष दर्शन रूप लीला विहार का आनन्द कितना होगा?अनन्त! अनन्त! अनन्त!

प्रणाम जी

वादविवाद प्रतियोगिता
विषय– जोश और आवेश एक ही है या अलग अलग?

प्रतिवादी– प्रणाम जी

वादी– प्रणाम जी सुन्दरसाथ जी

प्रतिवादी– आपको पता है आजकल हमारे समाज में बहुत बड़ा विवाद छिड़ा हुआ है।

वादी– ऐसा क्या हो गया है?कृपया स्पष्ट करने की कृपा करें।

प्रतिवादी– अरे! यही जोश और आवेश के ऊपर।

वादी– इसमें विवाद करने की क्या आवश्यकता है?जोश अक्षर ब्रह्म की एक शक्ति जबराईल को कहते हैं और आवेश, अक्षरातीत के निजस्वरूप को।

प्रतिवादी– अरे! आप इतने आसानी से ऐसा कैसे कह सकते हैं। आजतक मैं अपने अध्ययन के आधार पर यहीं निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जोश और आवेश एक ही है।

जैसा कि तारतम वाणी में कहा गया है–

दो भुजा सरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोस धनी धाम। प्र0 हि0 36 ।30

सो सुरत धनी को ले आवेस, नन्द घर कियो प्रवेश। प्र0 हि0 36 ।28

जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी धाम को भेले।

जोगमाया में बाढ़यो आवेस, सुध नहीं दुख–सुख लवलेस।। प्र0 हि0 26 ।80

वादी– देखिए महोदय किसी भी चीज को समझने के लिये उसका गहन अध्ययन अत्यन्त आवश्यक होता है। ऊपरी ज्ञान हमेशा घातक होता है। परमधाम से बाहर परमात्मा की लीला जहाँ कही भी होती है उसका प्रकटीकरण जोश के रूप में होता है। इसको आप शक्तिमान और शक्ति के रूप में भी समझ सकते है। जोश अर्थात् जबराईल का सम्बन्ध अक्षब्रह्म से है न कि राजजी से। मारिफत सागर में कहा गया है– जबराइल जवरूत से, याकी असल नूर मकान। सोहोवत करी महमद की, तो ल्याया हक फुरमान।।

जबरूत अर्थात् योगमाया के सत्स्वरूप पर जिस का स्थान है उसे परमात्मा कैसे कहा जा सकता है।

प्रतिवादी– ऐसा कैसे हो सकता है?जिस प्रकार वाणी में प्रेम– इश्क, पशु– जानवर,

आशा– उमेद, क्रमशः हिन्दी और अरबी के शब्द है उसी प्रकार जोश और आवेश भी समानार्थक शब्द हैं।

वादी– हिन्दी एव संस्कृत साहित्य में हद के चेतन को जीव तथा परमधाम के चेतन को आत्मा कहते हैं। किन्तु अरबी साहित्य में रूह से ही जीव तथा आत्मा दोनों का ही ग्रहण होता है। इसी प्रकार आवेश संस्कृत का शब्द है। इसके स्थान पर जोश शब्द का प्रयुक्त होता है, वह आवेश एंव जोश दोनों के लिये प्रयुक्त होता है। इसलिये यहां वन–जंगल,आशा–उमेद एवं प्रेम–इश्क का उदाहरण देना उचित नहीं है।

प्रतिवादी–यदि आपकी बात हम थोड़ी देर के लिये मान भी ले तो आप इस चौपाई का क्या आशय लेगें–

जोगमाया में खेल जो खेले,सगं जोस धनी के भेले।

जोगमाया में बाढयो आवेश,सुध नहीं दुख सुख लवलेस ।।प्र.हि.37/40

एक तरफ कह रहे है कि ''जोगमाया में बाढयो आवेश'' यानि वृंदावन में आवेश बढ़ गया। ऐसे कैसे सम्भव है कि कृष्ण के तन में जोश और वृन्दावन में आवेश। क्या कहीं लिखा है कि कृष्ण जी के तन में तीन शक्तियां अक्षर की आत्मा, जोश और आवेश थी?

वादि–महोदय आप बहुत ज्यादा शब्द जाल में फंस रहे है। एक तरफ आप जोश को वाणी के आधार पर जिबरिल,ऐसा नकार भी नहीं पा रहे हैं और दूसरे तरफ जोश को राजजी मानने की नादानी भी कर रहें हैं। जोश को ही आवेश मानने पर निम्न प्रश्न खड़े हो जाते हैं।–

1. श्यामा जी के जिस स्वरूप को जब स्वयं अक्षर ब्रह्म ने भी नहीं देखा तो जबराईल ने कैसे देख लिया बिना देखे उसने सागर ग्रन्थ में श्यामा जी का दो बार श्रृंगार वर्णन कैसे कर दिया ?

2. क्या जबराईल ने श्याम जी के मन्दिर में श्यामा जी को दर्शन देकर कहा था कि मैं तुम्हारा प्रियतम हूं और तुमने मेरे साथ इश्क–रब्द किया था। मैं ही तुम सबको साथ लेकर परमधाम जाउंगा।

3.क्या हब्से में इन्द्रावती जी के धाम हृदय में, श्यामा जी के बगल में जबराईल बैठा था?

4.आप और हम सब क्या जबराईल की पत्नियां हैं?

प्रतिवादी–(घबराते हुए) नहीं–नहीं! मेरा कहने का मतलब यह नहीं है। मैं तो सशंय में हूं उसका निवारण कर रहा हूं क्यों कि प्र.गु. और प्र.हि. में एक ही चौपाई में जोश और आवेश अलग–अलग क्यों लिखा हैं?क्या आपके पास इसका निवारण है?

त्यारे भागे आवेस कही पंचध्यायी, रास बरनन ना हुआ तिन ताई ।

तब भागे जोस कही पंचध्यायी ,रास बरनन ना हुआ तिन ताई ।।हि.गुज.

वादी–अरे महोदय आप तो शुकदेव जी को भी परमात्मा ठहरायेगें क्या! आपका सिद्धान्त तो कुछ ऐसा ही कह रहा है। वास्तव में आपको पता नहीं हैं– परमात्मा का जोश ही अक्षरब्रह्म का आवेश है। परमात्मा का जोश ही नानक, कबीर, शुकदेव जी, योगेश्वर कृष्ण के अन्दर आया जिसके माध्यम से वे अखण्ड का कुछ अंश वर्णन कर सके और भविष्यवाणी की। यदि हम जोश को ही आवेश मानते हैं तो हमें इन महापुरूषों को भी प्राणनाथ जी के समकक्ष करना पड़ेगा। क्या कोई सुन्दरसाथ ऐसा कर सकता है?क्या बीजक और गीता आदि को ब्रह्मवाणी जैसे पधराकर पूज सकते हैं चूंकि आपका तर्क होगा इनको भी जोश की शक्ति ने कहा था।

प्रतिवादी–(शर्मिन्दा होकर) मैं तो बहुत बड़ी भूल करने जा रहा था, धन्य है आप आज आपने मुझे सत्य मार्ग दिखाया।

वादि–भूल आपकी नहीं है सुन्दरसाथ जी ! भूल तो उन लोगों की है जो अपने विचारों को ही सत्य मानता है और दूसरे के विचारों पर पक्षपातपूर्ण ढंग से कुतर्कों के द्वारा प्रहार करता है। वह भूल जाता है कि सत्य के सूर्य को कभी पूर्ण रूप से आच्छादित नहीं किया जा सकता है। यद्यपि असत्य राही को यह आभास अवश्य होता हैं कि मैं असत्य का पक्ष ले रहा हूं , किन्तु अपने शुष्क बौद्धिक ज्ञान के अहं में वह जितना प्रयास झूठ को प्रचारित करने में लगाता हैं। उतना प्रयास यदि निष्पक्ष हृदय से सत्य को जानने में लगाता तो सम्भवत वह आध्यात्मिक आनन्द की गहराईयों में डूब रहा होता। आप भी शायद ऐसे ही विचारधारों से संक्रमित थे, इसलिये आपकी इसमें कोई गलती नहीं है।

प्रणाम जी

जन्मना जायते शुद्रो

जन्मान जायतें शुद्रो संस्कारात् द्विजोच्यते, माक्षुधन्म तृषत्–श्री भागवद् अर्थात चारों वर्ण गुण कर्म और स्वभाव के अनुसार बनाये हैं जन्म से सभी (अज्ञानी) ही पैदा होते हं। उच्य संस्कारो के ग्रहण के पश्चात ही किसी को द्विज, बाह्माण (ज्ञान से युक्त) की सज्ञां दी जाती है।

ज त एक खसम की, और न कोई जात। ।

एक खसम एक दुनिया, और उड़ गैयी दूजी बात।।

संनध 36/17

रविदास जी ने एक ब्राह्माण को कहा था कि जब मन ही पवित्र नहीं है, तो ग्रन्थ पढ़कर, स्नान करके ,उजले कपड़े पहन कर कोई द्विज नहीं बन सकता शरीर को तेल फ ु ल ` ल , पावडर, क्रीम, लिपिस्टिक,सैटं,इत्र,आदि से सुगन्धित करके शुद्ध व सुखी नहीं बनाया जा सकता इन वस्तुओं से पाप ही लगता है। क्योकि ये बेगुनाह, बेजुबान पशु–पक्षियों का अन्त करके बनाये जाते हैं। ब्रह्ममुनियों का देह श्रृगांर–सादगी स्वच्छता, मृदु–आबिता, सेवा–सर्मपण, आंखों की लज्जा आदि से है। कब तक सुन्दरसाथ अपने आपको धोखा देते रहोगे–कब तक ?अपने को सम्हालोगे ?शरीर की आन्तरिक शुद्धि–आन्तरिक शुद्धिकरण की प्रधानता आहार शुद्धि से होती है। आहार ऐसा हो जो नेक कमाई (न्यायोपार्जित) से हो। अन्याय से कमाये धन से अन्न में पवित्रता कहां से आ सकती है। जैसा खाया अन्न वैसा हुआ मन, जैसा पीया पानी वैसी बोली बानी। और मनुष्य की क्रियाऐं भी वैसी होगी और पाप का बोल–बाला होगा। प्राचीन काल में शिष्यों द्वारा लाई गयी भिक्षा के अन्न की शुद्धि पर

विशेष जोर दिया जाता था,कहा जाता कि शुद्ध,सरल, ज्ञानी, ध्यानी, परोपकारी,ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले गृहस्थ से ही दान,भिक्षा ग्रहण करनी है। भोजन का अन्तःकरण की शुद्धिता पर प्रभाव पड़ता हैं। क्योकि भोजन के स्थूल भाग से शरीर पुष्ट होता है, सूक्ष्म भाग से हमारा रक्त नाड़ी संस्थान, तन्त्र पुष्ट होते हैं। और अति सूक्ष्म अंश से हमारा अन्तःकरण हमारा जीव प्रभावित होता है। प्यारे साथियों कभी भी भूलकर किसी अन्यायी घूंसकलेर भ्रष्टाचारी गलत तरीके से कमाये धन का भोजन नहीं करना चाहिए। एक बार की बात है। मैं किसी के घर चाय–नास्ता करने आई थी तो रात में ध्यान के लिए बैठी तो ध्यान नहीं लगा मन चंचल हो गया। (सोने) निद्रा में भी स्वप्न गलत आये, कारण अन्न की पवित्रता ही नहीं,धन की पवित्रता भी होनी चाहिए महानिबाणि तन्त्रमे कहा है–ब्रह्माप्यात्मापिणं यतच्छोचमान्तरिकं स्मृतम्।। आत्मा को ब्रह्म मे अर्पण करना ही आन्तरिक शौच है। वास्तव में जब तक इस हाड़–मांस के शरीर में अहंवृद्धि,आसक्ति रहती है। (तब तक इस शरीर को कितना धो, पोछलें)तब तक शौच की सिद्धि हो ही नहीं सकती। इसका निर्माण ही अपवित्रता है। रक्त,मज्जा,मेद,अस्थि,वीर्य, कफ, पसीना थूक गीड़ आदि मे कौनसा पदार्थ है जो शुद्ध है। चमड़े के थैले में भरे इस अपवित्र पदार्थो के समूह को मनुष्य अपना रूप मानता है। जो सर्वदा ही अनुचित है। सुन्दर,स्वादिष्ट सुगन्धित रूचि कर पदार्थ भी इसके अन्दर जाकर थोडे समय में, अपवित्रता कुरूप घृणित, दुर्गन्धयुक्त बन जाते है। विष्ठा के रूप में पर्णित हो जाते है इसलिए अहंबुद्धि पालना सबसे बडी मूर्खता है। बाहय और आन्तरिक शुद्धि द्वारा बैराग्य और मन की प्रसन्नता और प्रकाश का प्रादुर्भाव होता है। महाराज पंतजलि ने शौच

का फल बताया–शौचात्स्वांग जुगुप्सा परैरसंसर्ग शौच की स्थिरता से अपने शरीर में घृणा और दूसरे में से सर्ग की अभाव होता है। परन्तु शरीर की अशुद्धि तो कभी मिट ही नहीं सकती है। अपितु आन्तरिक बाहय शौच करते 2 शरीर से घृणा और परमात्मा से प्रेम उत्पन्न होने लगता है। मनुस्मृति में कहा गया है।

आदभिः गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्पेन शुध्यन्ति।

विद्या तपोभ्याम् भ्तात्मा बुद्धिःज्ञानेन शुध्यान्ति।।

जल से शरीर शुद्ध होता है,सत्य का पालन करने से मन पवित्र होता है। विद्या और तप से जीव शुद्ध होता है ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है। वस्तुतः शौच का यही वास्तविक स्वरूप है। गीता का कथन है–आत्मा नदी सयंमपुण्यतीर्था सत्तोदका शीलतम दयोर्मि

तत्राभिषेकं कुरू पाण्डुपुत्र न वारिणा शुद्धयति चान्तारात्मा।।

हे पाण्डुपुत्र संयम जिसके पुण्यतीर्थ हों। जिसमें सत्परूपी जल भरा हो शील रूपी जिसके घाट हो और दया की जिसमें लहरें उठती हों, ऐसी आत्मा रूपी नदी में तू पवित्र हो जा (अन्तर्तात्मा)जीव को जल शुद्धि,चाहने वालों को निरन्तर स्वाध्याय ,आत्म–विचार,इन्दियसयम, सत्य, शील दया आदि गुणों का अनुशीलन करना चाहिए। प्यारें सुन्दरसाथियों श्रीजी ने फुरमाया है।

जो माहें निरमल बाहर देत दिखायी
वाको पारब्रह्म सो पहेचान

महामत कहे सगंत कर वाकी,कर वाही से गोष्ट ज्ञान।।कि026/7

इसलिए धर्म पन्थियों बाहय शुद्धता से अधिक आन्तरिक शुचिता, पवित्रता, अधिक ध्यान करेगें हमारे प्रियतम पल भर के लिए भी दूर नहीं होगें–अन्दर नहीं निरमल ,फेरफेर नहावे बाहिर। कर दिखावे कोट बेर तोहेना मिले करतार।। जैसा बाहेर होते है, जो ऐसा होवे दिल। तो अधखिन पियुन्यारा नहीं माहे रहे हिल मिल।

आपकी सब की चरणरज
राजबाला बेहट
952890360

आनन्द मंगल

श्री राज जी महाराज के अति प्यारे सुन्दर साथ जी आप यह अवश्य जानते होगें कि 'आनन्द' शब्द स्वयं में एक बहुत ही विस्तृत भाव को समेटे हुए है क्योंकि संसार की कामनायों से आनन्द का प्राप्त होना असम्भव है। धन और भौतिक उपलब्धि से अपने पूर्वे जन्म के पुण्यों के फलस्वरूप सुख तो निश्चित ही प्राप्त हो सकते हैं। परन्तु आनन्द मंगल तो सिर्फ आत्माकी अनुभुति एवं उपलब्धि है जो श्री राज जी महाराज की मेहेर और उनके हुकुम की बख्शीश से ही प्राप्त हो पाती है। जब कोई आत्मा अपने उस परमलक्ष्य तक पहुँच पाती है जो अनेक जन्मों के उच्च कर्मों के प्रतिफल के रूप में प्राप्त हो सकता है। जैसे महाराजा छत्रसाल जी ने प्राणनाथ जी के स्वरूप की पहचान पूर्ण ब्रह्म धाम–धनी अक्षरातीत के रूप में की श्री मुख वाणी की चर्चा को श्रवण करके उसे आत्मसात किया। हर समय श्री जी की सेवा तन मन और धन से की और श्री जी ने उन्हें अर्शीवाद स्वरूप अमीरूल मोमिन की शोभा प्रदान की। इस प्रकार महाराज छत्रसाल जी ने हम मोमिनों को एक सशक्त मार्गदर्शन भी प्रदान किया और सदैव करते भी रहेगें। सच तो यह है कि जितना सर्मपण छत्रसालजी ने करके दिखाया उतना कोई नहीं कर सकेगा। इसलिये यह अति आवश्यक है कि हम सब उनके भाव भरे शब्दो पर थोड़ा बिचार करें

सदा आनन्द मंगल में रहिये, सदा आनन्द मंगल में रहिये।

महाप्रसाद और चरणामृत, यह सुख साथ में पाइए।।

यदि हम सुन्दर साथ हर समय आनन्द की मीठी मीठी मस्ती में भाव विभोर होना चाहते हैं तो हमें वाणी

रूपी महाप्रशाद अपनी आत्मा को देना होगा।आत्मा का भोजन केवल प्रेम होना है और यह वचन ईश्क की भूमि श्री परमधाम से अवतरित हुए है। यह श्री श्यामा जी की रसना है। जिसमें धनी जी का प्रेम रस समाया हुआ है। इनको ग्रहण करके ही आत्मा को सन्तुष्टि होगी और वो अपने मूल आनन्द की लीला का चिन्तन एंव चितवनं करेगी। जब आत्मा प्रेम से भर जायेगी तो

निश्चित ही करनी करेगी। उसकी करनी भी पूर्णतया आत्मिक होगी और वो सबके मंगल की कामना करेगी और उनके लिये सच्चे मन चित्त और बुद्धि से प्रार्थना भी करेगी। इसमें अब कहीं भी कोई संशय नहीं कि दुआएँ मोमिनों की होत हैं कबूल। इस प्रकार उसके चारों ओर ही का वातावरण दिव्यता की मधुर सुगन्धित से महकने लगेगा। अपने ही सुन्दरसाथ के मिलावे में बैठकर वाणी चर्चा और युगल स्वरूप के चरण कमलों की शोभा, सुन्दरता और कोमलता को चितवन के द्वारा अनुभव करना , इसके अतिरिक्त और कोई महाप्रशाद और चरणामृत नहीं हो सकता।

इश्क सुराही प्रेम का प्याला, अन्दर
आतम छकि रहिये।
तन सोवे रूह निशदिन जागे, धाम धनी
के चरणों रहिये।।

श्री राज जी महाराज का दिल तो वास्तव में एक अति विशाल सागर सदृश्य है परन्तु हम सुन्दरसाथ को हमारे ही दिल में विराजमान होकर धनी अपनी इश्क की सुराही से अर्थात इश्क भरी नजरों से आब हैयाती के प्याले भर–भर कर पिलाते हैं।आत्माएं उसी मस्ती में हर समय तृप्त रहती हैं। उनका खाना पीना,सोना दोस्ती और सांस लेना सब धनी के स्वरुप के ध्यान द्वारा ही होता है। चूंकि तन तो कालमाया के पाँच तत्वों से निर्मित है उसका सोना, जागना, उठना बैठना तो यहाँ के नियमों के अनुकूल थोड़ा बहुत तो रहेगा परन्तु आतम अपनी परातम में अष्ट पोहोर जाग्रत ही रहेगी। यही तो उसकी इश्क भरी सेवा हैं कि वो हर पल मूल–मिलावा में जाग्रत होकर अपने प्राणों के प्रियतम श्री युगल स्वरूप की शोभा सौन्दर्य एंव आभा में खुद को पूर्णतया विलीन कर दे।यही तो उसकी सच्ची दोस्ती एंव पवित्र कर्म है जहाँ उसका स्वयं का कोई आस्तित्व दिखे ही नहीं। मोमिनों के धनी अक्षरातीत परमधाम का सूर्य हैं और वो उस नूर तेज और ज्योति की किरण है और उनके दिल रूपी अथाह सागरों की एक लहर मात्र है।

अष्ट पोहोर दिन चौंसठ घड़ियाँ, निशदिन
पीउ–पीउ कहिये।
छत्रसाल भजो धाम–धनी जी को, और
देवन सों क्या चहिये।। 3।।

एक दिन में आठ पहर होते हैं और चौंसठ घड़ियाँ होती हैं और पाँचवी गोल हवेली के मध्य के चबूतरे की किनार पर चौंसठ (64) थम्भों की हार है। चबूतरे से चारों दिशा में 3–3 सीढ़ियाँ उतरी हैं बाकी जगह में थम्भों के मध्य सुंदर कठेडा शोमायमान है। चबूतरे के पूर्व दिशा में सीढ़ियों से लगते हुए दो थम्भ पांच के हरे रंग के है जो अन्तः करण को विवेक प्रदान कर रहे है जिनके दाएं बाएं के 1.1थम्भ नीलवी के आसमानी रंग के हैं, जिनकी अद्भुत किरण मानो इश्क सागर

के प्रेम भरे रंगो की आभा को बिखेर रही है। पश्चिम दिशा में सीढ़ियों से लगते हुए दो थंभ नीलवी के व दाँये बाँए के एक–एक थम्भ पांच के है।उत्तर दिशा में सीढ़ियों से लगते हुए दो थंभ पुखराज के पीले रंग के हैं। जो आशिक और माशूक के अरस परस के प्रेम के रंग को दिखलाते हैं । इसके दायें–बाये के दो थंभ माणिक के हैं। लाल–पीले दानों रंग निसबत की गहराई रूहों कीशोभा,गरिमा और सौन्दर्य के असीम सुखों का एहसास करवाते है। दक्षिण दिशा में सीढ़ियो से लगते हुए दो थंभ माणिक के व इसके दाये बांये के एक–2 थंभ पुखराज के है। चितवन में हर थंभ की रोशनी की नूरभरी किरणें अलग–अलग तरीके से आनन्द को प्रदान करेगी और इनकी एकरसता ही आत्मस्वरूप को पुष्टि प्रदान करेगी। इस प्रकार यह आठ विशिष्ट थम्भ श्री राज जी के आठों सागरों की विशालता एंव गहराई को लिये हुए साक्षात विद्यमान हैं। ये आठों थम्भ चार द्वारों के रूप में पूरे मूल मिलावा में अदभुत रंग बिखेर रहे हैं। इनकी शोभा नूर, तेज और सौन्दर्य अतुलनीय एंव अवर्णनीय हैं।

अब चारों खाँचो में 12–12 थम्भ हैं जो इस प्रकार हैं हीरा, लसनिया, गोमादिक, मोती, पन्ना, परवाल, हेम, चाँदी, नूर, कंचन, पिरोजा और कपूरिया। चारों तरफ एक एक रंग के चार चार थम्भ और इनकी मेहराबें दो दो रंगो की हैं। अब यदि अर्न्तदृष्टि से पूरब और पश्चिम के दरवाजे से शुरू करके,उतर और दक्षिण के दरवाजों की तरफ से निरखना शुरू करेंगे तो हर एक रंग के चार–चार थंभों की सुन्दरता दिल में आनी शुरू हो जायेगी अर्थात प्रेम की सुगन्ध और निसबत की खुशबू पूरे अन्तः करण में महसूस होनी शुरू हो जायेगी तमी तो रंग रंगीले मोहोल में पिया जी रंग रगीले अपनी आत्माओ को जागनी की रास के अखण्ड सुखों को प्रदान करेगें। सुन्दर साथ जी याद कीजिए श्री जुगलस्वरूप सिंहासन के ऊपर विराजमान हैं। आपन सब सखियां श्री राज जी के चरणों तले भराय के बैठी हैं। ऊपर नूर को चन्द्रवा झलकत है। फिरते–फिरते चौसंठ थम्भ नूर के झलकत हैं। तहाँ श्री राज जी के चरणों तले खडे होए के अर्ज विनती कीजिए कि साहेब मेरे तुम्ही जो करी सो भई और करत हो सो होत है और करोगे सो होएगी तुमारी हमको इस्क पातसाही की खबर न हुती। ना सुख की और न दुःख की ना मिलाप

की न जुदागी की। तुमारी हमको काई बात की कुछ खबर न हुती। हमारे लाड के पूरन करन हारे मेहरबान। हमारे लाड पूरन कीजिए। जिन तुमारे चरणामृत प्रसाद को आसरो लियो होए। शब्द वाणी कानों से सुनी होए या जुबान से कही होए। तिनको इन जहर जिमि से छुडाए के, अपने कदमों तले बैठाए कर, साक्षात दीदार दीजे इनको नूर से पूर कीजे सब मिल कर गोदी ओढ के यही अर्ज विनती करत हैं। श्री जी साहेब जी को प्रणाम श्री महाराजा जी को प्रणाम। श्री बाई जी साहेब जी को प्रणाम।। सेवा पूजा– अरजी बड़ी

श्री प्राणनाथ जी ने महाराज छत्रसाल एवं समस्त सुन्दरसाथ को चर्चा एवं चितवन के द्वारा जागनी रास के अखण्ड सुख प्रदान किये। लाल दास कृतश्री बीतक साहिब में, दूसरे पहर (9 से 12) में इन्हीं आत्मिक सुखों का वर्णन किया है जो धाम–धनी अपने श्री मुख से जब परमधाम का वर्णन करते है दरिया की तरंगों के समान उनके हृदय से पूर के पूर चर्चा के उमड़ उमड़ कर निकलते हैं। जो सुन्दर साथ एकाग्र चित्त होकर चर्चा सुनते है उनके दिल में अति जोश एवं उंमग पैदा होती हैः–

दिल दरियाव खुलत है, कई लहरां उठत तरंग।
श्रवणा देतजो साथ जी, कई उपजत अंग उमंग। श्री बीतक साहब– 64/63

सुन्दर साथ जी। इस प्रकार हमारी आत्मा का आनन्द एवं हमारे ब्रह्माण्ड का मंगल सब कुछ श्री प्राणनाथ जी की वाणी के सार में छिपा हुआ है। आज भी जिन मोमिनों ने वाणी–वचनों के साथ बंधन बाँधे है,उनकी आतम की निसबत मूल स्वरूप के चरण–कमलों के साथ देर सबेर निश्चित ही जुड़ जाती है। तब तन द्वारा सिजदा, मन द्वारा सर्मपण एवं जीव क द्वारा पहचान, सब धाम–धनी अपनी मेहेर और हुकुम से स्वयंमेव ही करवा लेते हैं। हमें यह पूर्ण विश्वास करना ही होगा कि श्री मख वाणी का प्रत्येक शब्द अटल सत्य है। यही तो प्रगट ''वाणी की निम्न चौपाई हम प्रतिदिन पढ़ने हैः–

इतहीं बैठे घर जागे धाम, पूरन मनोरथ हुए सब काम।
धनी महामति हँस ताली दे, साथ उठा हंसता सुख ले।। प्र. हि. 17/118

अब समस्त सुन्दरसाथ मूल–मिलावे में बैठे–बैठे ही घर में जागे और चाहनाँए जो बाकी थी, वह पूर्ण हो गई। अब धनी के साथ सब सुन्दरसाथ हंसते हुए ताली देकर मूल–मिलावे में उठेंगे।

।।प्रणाम जी।।

नीरू खुराना
कानपुर

त्याग–महान

एक फकीर के पास एक महाजन आया। वह कुछ दिन उनके सानिध्य में रहने का इच्छुक था।फकीर ने उसे सहर्ष अनुमति दे दी। जब महाजन ने फकीर के साथ रह कर उनके त्यागमय जीवन को देखा तो वह बहुत प्रभावित हुआ। उनसे विदा लेते वक्त उसने फकीर को कुछ भेंट देनी चाही,किन्तु फकीर ने कहा मुझे किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। यदि देने की ही इच्छा रखते हो तो किसी जरूरत मंद की सहायता करों। महाजन को हैरानी हुई क्योंकि फकीर के पास एकफटी चादर और पहनने के वस्त्र के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। वह उन्हें प्रणाम कर चला आया।

घर आकर जब उसने फिर से अपने व्यवसाय को संभाला तो उसका मन नहीं लगा। उसे महसूस हुआ कि आदमी के जीवन का उद्देश्य मात्र पैसा कमाना ही नहीं हैं, बल्कि उसे आत्मविकास की दिशा में कुछ सार्थक करना चाहिए। बहुत सोचने के बाद उसने ऐशो–आराम का जीवन त्यागने का निर्णय लिया। परिवार के विरोध के बावजूद उसने अपने छोटे भाई को सारे कारोबार की कमान दे दी और स्वयं सन्यासी बन गया।

वर्षो बाद उसकी फकीर से भेंट हुई। उसने फकीर को अपना परिचय देकर उनसे प्रभावित हो संन्यास ग्रहण करने की बात बताई। फिर वह बोला, आप वास्तव में धन्य हैं। आपका त्याग अद्भूत है, जिससे मैं गहरे तक प्रभावित हुआ। उसकी बात सुन कर फकीर ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा,तुम्हारा त्याग मुझसे बढ़कर है, क्योंकि मेरा जीवन तो आरम्भ से ही ऐसा रहा है। पर तुम तो अमीरी में पले हो। सच्चे त्यागी तो तुम हो, जिसने कुबेर के पद को छोड़कर फकीर का वेश धारण किया। तुम्हारा त्याग महान है

प्रणाम जी

साबूदाना

यह पाचक, पौष्टिक, शीघ्र पचने वाला और हल्का होता है। इसे दुर्बल व्यक्ति एवं रोगियों को दूध या पानी में पकाकर पथ्य के रूप में देना चाहिए।

दस्त–100 ग्राम साबूदाना एक गिलास पानी में रात को भिगो दें। प्रातः छलनी में डालकर साबूदाना निकाल लें तथा पानी फेंक दें। इन साबूदानों को मंद आग पर सेंकें। सेंकते समय इन पर एक चम्मच घी, एक चम्मच जीरा डाल दें। सेंकने के बाद इन पर स्वादानुसार शक्कर और चौथाई चम्मच नमक डालकर प्रातः भूखे पेट खायें। इनको खाने के बाद तीन घण्टे अन्य कोई चीज नहीं खायें। इसी से दस्त शीघ्र बन्द हो जायेंगे। खाने की क्षमतानुसार मात्राबढ़ा– घटा सकते हैं।

साबूदाना फलाहार माना जाता है और उसका उपवास तथा एकासन के दिनों में व्यापक उपयोग होता है। साबूदाना शकरकंदी के गूदे से बनाया जाता है। किन्तु इसके निर्माण की प्रक्रिया इतनी हिंसक और घिनौनी है कि न तो उसे स्वास्थ्यप्रद ही कह सकते हैं और न ही फलाहार। यहाँ हम गोंडल सम्प्रदाय की साध्वी महासती जसुमतीबाई के शब्दों में साबूदाने के सम्बन्ध में रौंगटे खड़े करने वाला आँखों देखा विवरण दे रहे हैं ताकि हमारे पाठक खुद यह तय कर सकें कि साबूदाना खाने योग्य है अथवा नहीं है।

''यहाँ जो मैं लिख रही हूँ वह प्रत्यक्ष देखी हुई बात है–

दक्षिण भारत में तमिलनाडु राज्य के सेलम क्षेत्र में साबूदाना उद्योग एक सुविकसित उद्योग है। मद्रास, कोयम्बदूर के बीच साबूदाने के कई कारखाने आते हैं। इन कारखानों से कोई दो– ढाई किलोमीटर की दूरी से ही दुर्गन्ध का दौर शुरू हो जाता है। यह गंध इतनी तीखी और असह्य होती है कि

सड़क पंर चलना ही मुश्किल हो जाता है।

विहार करते हुए साथ चल रहे एक भाई से मैंने सहज ही पूछ लिया कि यह इतनी बदबू कहाँ से आ रही है?उसने कहा – यह दुर्गन्ध साबूदाना–फैक्ट्रियों की है।

संयोगवश विहार करते हुए हमें एक फैक्ट्री में ठहरना पड़ा। यहाँ हमने यह देखा और सोचा कि क्या साबूदाना खाने योग्य है?साबूदाना कोई फल तो है निहीं, वह एक फैक्ट्री उत्पादन है। अब देखने से पता चला कि साबूदाना शकरकंद से बनाया जाता है।

शकरकंद की ऋतु में कारखाने वाले इसे खरीदकर इकट्ठा कर लेते हैं और बाद में इसका मावा बना लेते हैं। मावा अथवा गूदा बनाने की प्रक्रिया बड़ी लोमहर्षक है। तैयार गूदा खुले मैदान में 40'ग'25 तथा 40'ग35' वर्ग फुट बनी कुण्डियों के तले में पड़ा रहता है। रात में इन कुण्डियों पर बड़े–बड़े बल्ब जलाये जाते हैं, जिसके कारण अनेक जहरीले जीव–जन्तु इनमें गिरते हैं और अन्दर ही दम तोड़ देते हैं। दूसरी ओर मावे (गूदे) में पानी डालते रहते हैं, फलस्वरूप उसमें सफेद रंग की करोड़ों लम्बी–लम्बी लटें पड़ जाती हैं, ठीक वैसे ही जैसी प्रायः संडास के गटरों में उत्पन्न होती हैं। आठ–दस दिन बाद कुण्डियों में छोटे–छोटे श्रमिक बच्चों को उतारा जाता है और मावे को गुँधवाया (रूँधवाय) जाता है। रौंदने की इस प्रक्रिया में लटें मर जाती हैं। यह प्रक्रिया 4–6 महीनों के रूप में आता है। सुखाये जाने के बाद इन पर ग्लूकोस और स्टार्च से बने पाउडर का पालिश की जाती है।

इस तरह यह निर्विवाद है कि साबूदाने के उत्पादन में भारी जीवहिंसा होती है और वह सेहत के लिए घातक है। यदि मैं नग्न सत्य कहूँ तो साबूदाना यानी करोड़ों लटों का कलेवर।''

प्रणाम जी

अरवाह आशिक जो अर्श की

प्राणधार सुन्दर साथ जी, हम तारतम लेने के बाद सोचते है कि हमें परमधाम जाने की चाबी मिल गई। अब तो हम राज जी की अगंना बन चुकी है हमें अब कुछ करने की आवश्यकता नहीं हैं विवेक नहीं है, सब कुछ पढ्ने के बाद भी वैराग्य की धारा हमारे हृदय में प्रवेश नहीं कर पाती तो यह समझना चाहिए। का आपका यम सम्प्रदाय के लिए हमारे हृदय में बन्द द्वार खुल गऐ है। सिनगार के 23 प्रकरण की पहली चोपाई में विराजमान होकर क्या कहा है–

अरवाह आशिक जो अर्स की, तामे हिरदे हम सूरत।
निमख न न्यारी हो सके, मेहबूब की मूरत।।

परम धाम की जो आशिक आत्माए होती है उनके धाम हृदय में राज जी का स्वरूप विराजमान होता है उनके हृदय से एक क्षणके लिए भी प्रियतम का स्वरूप अलग नहीं होता।

परमधाम मे हम आशिक रूहें राजजी (अपने माशूक) को हर पल रिझाने के तरह तरह के तरीके सोचा करती थी कि हम अपने प्रियतम को किस प्रकार से रिझा सके?इस माया ने इस प्रकार से हमारी बुद्धि पर परदा डाला कि हम परमधाम की सभी लीलाएं अपने आनन्द हास विलास, सुख जो हम परम धाम में धनी के साथ पल पल लेती थी वही हमारे रमणीय स्थल हमें विस्मृत हो चुके है इस माया की नगरी मे स्वपनिक संसार में आकर अपने अपने कबीले बनाकर बैठ गई पति, बच्चे, रिश्तेदार की परिवार की बेढ़ियां इस प्रकार से जकड़ गई। कि यही हमें सत्यं एवं प्रिय लगने लगा। माया के नशे में भी अज्ञानता रूपी अन्धकार में यपुण्य पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्धो की ही सर्वोपरि मान लेता है कि प्रेम और आनन्द में सागर रूपी पारब्रह्मसे अपना मुख मोड़े रहती

है जब तारतम वाणी का प्रकाश मन के अन्दर होता है तभी उसे समझ आता है कि यह शरीर यह संसार सब कुछ नश्वर है और यह सांसारिक सम्बन्ध सभी स्वार्थ परिक हैं। तभी उसे राज जी के अखण्ड अनन्त प्रेम का पता लगता है

राजजी ने तो बाणी में यहाँ तक कहाँ है कि ब्रह्मसृष्टि तो बिजली की तरह नश्वर संसार का मोह त्याग कर अपने प्रियतम पर पूर्ण रूप से समर्पित हो जाती है।

सिनगार ग्रन्थ के 23 वे प्रकरण में श्री राज जी ने महामति के धाम हृदय मे विराज मान होकर हमें (सिखापन) कहा है– रूहे केहेलाय छोड़े क्यों अपना, क्यो याद दिए हमें याही वास्ते भेज्या अपना नूरी रसूल ब्रह्म सृष्टियां वैसे तो परमधाम की आत्माएं कहलाती है फिर वह अपने ही निज घर में जहाँ धनी के साथ नये नये आनन्द व रसमयी लीलाएं किया करती हर समय प्रियतम के प्रेम मेंही डूबी रहती थी वे रूहें याद दिलाने पर भी अपने मूल सम्बन्ध में कैसे भूल समझती है जबकि राज जी ने याद दिलाने के लिए संदेश वाहक के रूप में अपने नूरी रसूल को भेजा।

वाणी के द्वारा धनी ने स्वयं ही रूहो के मन में उठने वाले प्रश्नों को रख कर भी रूहो के इस तरह के प्रश्न उठ सकते है स्वयं ही तुरन्त उसका समाधान भी किया है अगर रूह के दिल में यह आता है कि हम जो आत्माएं हैं हम सब के हृदय में प्रेम भरा हुआ है यदि राज जी का हूकम हमारे आड़े ना आए तो हमारा इश्क हमसे अलग हो ही नहीं सकता कहने का तात्पर्य यह है कि रूहें कहती है यह राज जी का हुकम ही है जिस कारण से हमें अपने धनी को याद करके हम नश्वर संसार के मोह मे पड़ी हुई हैं, हमारे अन्दर धनी के प्रति जे इश्क था वह समाप्त हो गया है लेकिन कुलजम स्वरूप ग्रन्थ में धनी ने सिखापन दी है कि यदि तुम ब्रह्मवाणी के ज्ञान से अपने प्रियतम के स्वरूप की पहचान कर लेती हो अपने आत्मिक नेत्रों से युगल स्वरूप को देखने का प्रयास करती हो तो तुम्हें तुम्हारा वह प्रेम अवश्य प्राप्त हो जाएगा।

सभी ग्रन्थ, शास्त्र, वेंद , पुराण सभी को पढने वाले विद्वान मनीषी योगेश्वर यहाँ तक कि त्रिदेवा भी जिस पूर्ण ब्रह्म परमात्मा को खोजते खोजते थक गए पूर्ण ब्रह्म परमात्मा ने अपने बारे में किसी को पहचान

नहीं दी कि मैं कैसा हूँ?कहाँ हूँ?लेकिन निसबत के कारण ही आपने हमें अपने चरण मे इस प्रकार लिया कि हर पल, हर क्षण यहीं अनुभव होता है हर पल हमारे साथ हैं हमारी श्वास की नली से भी अधिक नजदीक हैं खिलवत ग्रन्थ के पाँचवे प्रकरण की चोपाई– नं 15 में धनी ने कहा है कि–

मैं रह न सकों रूहों बिन, रूहें रह न सके मुझ बिन।
जब पेहचान होवे वाको, तब सहे का बिछोहा ।।

जो रूहे परम धाम से आई है जिनके दिल को राजजी ने अपना अर्श बनाया है वह तब तक हीं धाम धनी की भाम करती है जब तक उन्हें पूर्ण पहचान नहीं होती इश्क नहीं आता इश्क आने के बाद बन्दगी समाप्त हो जाती है क्यों कि दोनो एक रूप हो जाते है।

मोमिन जब लग बंदगी, जोलो आया नहीं इश्क।
इस्क आए पिद्दे बंदगी, एक जाथे मासूक या आशिक।।

सुन्दर साथ जी, ब्रह्म सृष्टियो की भांति हृदय से शुरू होती है वह चितवनि से ही अपने धाम धनी को प्रियतम को हर पल अपने दिल में बसाने का प्रयास करती है, यदि ध्यान में मन नहीं भी लगता मन इधर उधर भागता है मन में तरह तरह के विचार आते है ऐसी स्थिति में हम धनी के प्रति पूर्ण श्रद्धा भाव रखते हुए दृढ सकंल्प लेकर धनी की शोभा को निहारने में लगाते है तो अवश्य ही धनी की शोभा बसने लगती है और विरह प्रेम भी बढ़ने लगता है जब वह धनी के प्रति प्रेम और विरह अपनी चरण अवस्था पर पहुँच जाता है तो हमारी अन्दर की आँखो के सामने युगल स्वरूप प्रत्यक्ष दिखने लगते है। आत्मा जब धनी की शोभा को देखते देखते अपने आप को ही भूल जाती है तब आत्मा के हृदय में युगल स्वरूप की शोभा हमेशा के लिए अखण्ड़ हो जाती है। इश्क का जोश आते ही धाम हृदय में आत्मा के धाम हृदय में युगल स्वरूप विराजमान हुए नजर आते हैं।

धनी ने वाणी में स्पष्ट कर दिया है कि जो अर्श की आशिके रूहें है उनके हृदय में हम सूरत बसी होती है वह अपने प्रियतम महबूब की सूरत देखे बिना पल भर भी नहीं रह सकती राज जी उनके दिल को अर्श बना कर बैठे है तो सुन्दर साथ जी हमारा दायित्व बनता है कि अगर हम यह दावा लेते है कि हम परमधाम की रूहें है तो हमें अपने हृदय को किस प्रकार अर्श बनाकर महबूब की सूरत को हृदय में बसान है तभी हम दावे से कह सकते हैं –

अर्श तुम्हारा मेरा दिल है, तुम आए करो आराम।
सेज बिछाई रूच रूच कि , यहि तुम्हारा विश्राम।।

ज्योति सिरसा
ज्ञानपीठ

ज्ञानपीठ की ओर से बीतक चर्चा करने वाले प्रचारकों के नाम

	प्रचारक के नाम	स्थान
१.	चंचल जी महाराज	ज्ञानपीठ, सरसावा (उ.प्र.)
२.	ज्योत्सना बहन	खरेड़ी, (दाहोद)
३.	किरण बहन	गुधनामई (उ.प्र.) व दमोह, (मध्य प्रदेश)
४.	ज्योति बहन	सिरसा, (हरियाणा)
६.	सूर्यप्रताप जी	बड़ोदरा
७.	अर्जुन जी	उमरिया, बोरकुण्डिया, (गुजरात)
८.	तेजसिंह जी एवं नीरज जी	रामोद, (गुजरात)
८.	ओमनाथ जी	.....
९.	अशोक जी	.....
१०.	राजकुमार जी एवं अविनाश जी	नेलसुर एवं बाउका, (गुजरात)
११.	पुकार जी एवं विजय जी	गुना, (मध्य प्रदेश)
१२.	बालकृष्ण जी	सुवर्णपुर, (नेपाल)
१३.	सुभाष जी	बनेपा, (नेपाल)
१४.	शशांक जी एवं आरूणी जी	लखनऊ (उ.प्र.)

प्रणाम जी

सुन्दरसाथ से अनुरोध

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी आप सभी को यह विदित होगा कि हमारी 'तारतम मंजरी मासिका पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य जन–जन के हृदय में सत्य ज्ञान का प्रकाश एवं श्री प्राणनाथ जी के वाणी को प्रचारित करना है।

अतः इस पुनीत कार्य में आपकी सहायता अपेक्षित है, तारतम मंजरी पत्रिका में लेखों की कमी है, यदि आपके के अन्दर किसी भी प्रकार के सद्विचार उत्पन्न होते हैं तो अपनी लेखनी के द्वारा उन विचारों को लेखों में परिवर्तित कीजिए और अपने सद्विचारों को इस पत्रिका के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाइए।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र.
247232
MICR-Code" 247016005
IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
१३३५०००१००१११६१६
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
१३३५०००१००११८७५१
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
३४६७११८८७६७
भारतीय स्टैट बैंक
(११४३६) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- २४७२३२
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	किरंतन टीका	300.00
2.	खिलवत टीका	150.00
3.	सागर टीका	170.00
4.	श्रृंगार टीका	300.00
5.	सिन्धी टीका	150.00
6.	परिक्रमा टीका	275.00
7.	परिक्रमा टीका (अंग्रजी)	350.00
8.	विद्वत्दमनी	200.00
9.	धाम सुषमा	60.00
10.	पटदर्शन	200.00
11.	दोपहर का सूरज (हिन्दी)	60.00
12.	दोपहर का सूरज (अंग्रेजी)	80.00
13.	प्रेम का चाँद	65.00
14.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00
15.	बोध मंजरी (अंग्रेजी)	15.00
16.	बोध मंजरी (नेपाली)	30.00
17.	ज्ञान मंजूषा	20.00
18.	हमारी रहनी	50.00
19.	अमृत बिन्दु	10.00
20.	सत्यांजलि	40.00
21.	बाल युवा संस्कार	10.00
22.	संस्कार पद्धति	15.00
23.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
24.	चितवनी	05.00
25.	चितवनी नक्शा	30.00
26.	नित्य पाठ (चौपाई)	15.00
27.	नित्य पाठ (बीतक)	05.00
28.	मेहर सागर	10.00
29.	श्रृंगार के मोती	15.00
30.	सागर के मोती	10.00
31.	अनमोल मोती	05.00
32.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
33.	अनमोल मोती तफसीरे हुसैनी	50.00
34.	जामिल–ए–मारिफल	30.00
35.	फरमान	30.00
36.	बुलंद मुकदमा बड़ा मसौदा	40.00
37.	शब–ए–मेअराज	15.00
38.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
39.	Supreme Truth God	20.00
40.	सी. डी., डी. वी. डी. तथा एम. पी थ्री. (गायन एवं चर्चा)	
41.	जागो और जगाओ	100.00
42.	निजानन्द योग	60.00
43.	ब्रह्मवाणी चर्चा	40.00
44.	सेवा पूजा	30.00
45.	मुख्तार–ए–हिंद	20.00
46.	Nijanand School	120.00
47.	श्री मुखवाणी संगीत (राग सहित)	150.00
48.	प्रश्नमाला	05.00
49.	प्राणनाथ महिमा (हिन्दी)	20.00
50.	प्राणनाथ महिमा (गुजराती)	20.00
51.	बोध मंजरी (गुजराती)	15.00
52.	सिनगार (गुजराती)	300.00
53.	सागर (गुजराती)	170.00
54.	चितवनी (गुजराती)	05.00
55.	कैलेंडर	10.00
56.	स्टीकर (प्रणाम जी)	30.00
57.	बड़ा स्टीकर (प्रणाम जी)	125.00
58.	बोध मंजरी (उड़ीया)	15.00
59.	श्री मुखवाणी संगीत	60.00